87 सूरए अल आला

न्याय दर्शन की दृष्टि से कुरआन की सूरह अल-आला की आयत संख्या (1-5) का क्रमशः विश्लेषण नीचे प्रस्तुत है। हर आयत की समीक्षा एक-एक कर न्याय दर्शन के विभिन्न तत्वों (प्रमेय, प्रमाण, हेतु, अनुमान, उपमान, व्याप्ति आदि) के आधार पर की गई है।

□ □□□ 1

आयत:
"ऐ रसूल अपने आलीशान परवरदिगार के नाम की तस्बीह करो।"

चयनित न्याय तत्व: प्रमाण (Pramana)

विश्लेषण:

प्रतिज्ञा (Pratijna):
ईश्वर के नाम की तस्बीह करना आवश्यक बताया गया है।

हेतु (Hetu):
इसका आधार यह है कि "परवरदिगार आलीशान है", इसलिए उसकी स्तुति करनी चाहिए।

उदाहरण (Udaharana):
न्याय दर्शन में कोई भी कार्य केवल श्रद्धा नहीं, प्रमाण से सिद्ध होना चाहिए - जैसे कोई औषधि लेने से पूर्व उसका प्रभाव प्रमाण द्वारा जाना जाता है।

उपनय (Upanaya):
तस्बीह का आदेश तब मान्य हो सकता है जब ईश्वर की महानता का प्रमाण प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द या उपमान के रूप में सुस्पष्ट हो।

निगमन (Nigamana):
यह आदेश तर्कसंगत प्रमाण के बिना केवल भावनात्मक है, अतः न्याय दर्शन के अनुसार अमान्य है।

□ □□□ 2

आयतः
"जिसने (हर चीज़ को) पैदा किया।"

चयनित न्याय तत्व: प्रमेय (Prameya)

विश्लेषण:

प्रतिज्ञा (Pratijna):
हर वस्तु का निर्माता केवल ईश्वर है।

हेतु (Hetu):
यह आयत सृजन के समस्त उत्तरदायित्व को ईश्वर पर केंद्रित करती है।

उदाहरण (Udaharana):
वैशेषिक दर्शन में द्रव्य, गुण, और कर्म के संयोग से पदार्थ उत्पन्न होता है; और यह प्राकृतिक कारणों द्वारा संचालित होता है, किसी एक सत्ता द्वारा नहीं।

उपनय (Upanaya):
यदि कोई कहे कि "हर चीज़" का निर्माता ईश्वर है, तो यह वैदिक दर्शन और सांक्य के प्रकृति-पुरुष द्वैत से भी विरोध करता है।

निगमन (Nigamana):
यह कथन न्याय दर्शन के प्रमेय के अंतर्गत तर्कहीन है क्योंकि यह विविधतापूर्ण कारणों की उपेक्षा करता है और ईश्वर की भूमिका को बिना तर्क या प्रमाण के घोषित करता है।

□ □□□ 3

आयत:

"और दुरुस्त किया और जिसने (उसका) अन्दाज़ा मुक़र्रर किया फिर राह बतायी।"

चयनित न्याय तत्व: हेतु (Reason)

विश्लेषण:

प्रतिज्ञा (Pratijna):

ईश्वर ने सभी चीजों को संतुलित बनाया और उन्हें राह दिखाई।

हेतु (Hetu):

यह दावा करता है कि हर जीवधारी में जो प्रवृत्ति, रूप-गठन और व्यवहार हैं, वे ईश्वर द्वारा निर्धारित हैं।

उदाहरण (Udaharana):

सांख्य दर्शन में जीव की प्रवृत्ति उसके कर्म और प्रकृति के संयोग से निर्धारित होती है, न कि किसी एक सत्ता की कृपा से।

उपनय (Upanaya):

किसी व्यक्ति का आचरण और जीवनपथ उसके स्वकर्म और प्रकृति-गुणों के परिणामस्वरूप होता है।

निगमन (Nigamana):

यह आयत आत्मनिर्णय और स्वकर्म को नकारते हुए एक पराशक्ति पर निर्भरता दर्शाती है, जो न्याय दर्शन की स्वतन्त्र जीव की अवधारणा से मेल नहीं खाती।

□ □□□ 4

आयत:

"और जिसने (हैवानात के लिए) चारा उगाया।"

चयनित न्याय तत्व: व्याप्ति (Vyapti)

विश्लेषण:

प्रतिज्ञा (Pratijna):
ईश्वर ही चारा उगाने वाला है।

हेतु (Hetu):
यह प्रकृति में हर जैविक प्रक्रिया को ईश्वर की योजना मानता है।

उदाहरण (Udaharana):
वैशेषिक और न्याय दर्शन में वनस्पति चक्र को पंचमहाभूतों (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश) और उनकी क्रिया से उत्पन्न माना गया है।

उपनय (Upanaya):
यह दावा प्रकृति के वैज्ञानिक नियमों की व्याप्ति को नकारता है और कारण-कार्य संबंध का सरलीकरण करता है।

निगमन (Nigamana):
इस आयत में जो व्याप्ति मानी गई है (चारा = ईश्वर का कार्य), वह सिद्ध नहीं होती। यह न्याय दर्शन की व्याप्ति प्रक्रिया का उल्लंघन है।

□ □□□ 5

आयत:
"फिर उसे खुश्क कर दिया और वह सियाह रंग का कूड़ा बन गया।"

चयनित न्याय तत्व: अनुमान (Anumana)

विश्लेषण:

प्रतिज्ञा (Pratijna):
ईश्वर ही चारे को सूखा और कूड़ा बनाता है।

हेतु (Hetu):
यह दावा है कि वनस्पति का विनाश भी ईश्वर की इच्छा का परिणाम है।

उदाहरण (Udaharana):
भौतिक विज्ञान कहता है कि वाष्पीकरण, तापमान और नमी के कारण वनस्पति सूखती है, न कि किसी इच्छाशक्ति के कारण।

उपनय (Upanaya):
यदि ईश्वर इसे सुखा रहा है, तो इसका प्रत्येक तात्कालिक कारण जैसे तापमान, मौसम, जल की कमी, आदि अर्थहीन हो जाते हैं।

निगमन (Nigamana):
यह अनुमान प्रकृति की स्वतः क्रियाशीलता को नकारता है, जो न्याय दर्शन की अनुमिति प्रक्रिया से असंगत है।

□ सारणी : न्याय दर्शन के अनुसार आयतों का तार्किक मूल्यांकन

आयत संख्या	चुना गया न्याय तत्व	मुख्य आलोचना
1	प्रमाण	"तस्बीह" का आदेश बिना प्रमाण के भावनात्मक अपील है।
2	प्रमेय	सृष्टि की एकल निर्माता सत्ता का दावा बिना ऐतिहासिक/वैज्ञानिक आधार के है।
3	हेतु	नियत राह और आकृति का निर्धारण ईश्वर द्वारा कहना तर्कहीन है।
4	व्याप्ति	चारे की उत्पत्ति को केवल ईश्वर की कृपा बताना कारण-कार्य सिद्धांत के विरुद्ध है।
5	अनुमान	वनस्पति के सूखने को ईश्वर की योजना मानना प्रकृति के नियमों का निषेध है।

□ समग्र निष्कर्ष :

सूरह अल-आला की आयतें न्याय दर्शन के प्रमेय, प्रमाण, व्याप्ति, अनुमान और हेतु जैसे तात्त्विक स्तंभों के विरुद्ध पाई जाती हैं। इन आयतों में प्रकृति और सृष्टि को एक सर्वशक्तिमान सत्ता की इच्छा का परिणाम बताकर स्वतंत्र कार्य-कारण व्यवस्था को नकारा गया है। न ही इनमें तर्कसंगत प्रमाण दिए गए हैं, और न ही अनुभवजन्य साक्ष्य। अतः ये आयतें सार्वभौमिक और न्यायसम्मत सिद्धांतों के अनुरूप नहीं मानी जा सकतीं।

आप अगली आयत भेज सकते हैं।

नीचे प्रस्तुत है सूरह अल-आला (87:6–10) की आयतों का न्याय दर्शन की दृष्टि से क्रमवार विश्लेषण – प्रत्येक आयत को Pratijna, Hetu, Udaharana, Upanaya, Nigamana के ढांचे में, और Nyaya Darshan के तत्वों (प्रमाण, प्रमेय, व्याप्ति, अनुमान, उपमान आदि) का प्रयोग करते हुए तर्कपूर्वक खंडन किया गया है।

□ □□□ 6

"हम तुम्हें (ऐसा) पढ़ा देंगे कि कभी भूलो ही नहीं।"

चयनित न्याय तत्त्व: अनुमान (Anumana)

विश्लेषण:

प्रतिज्ञा (Pratijna):
ईश्वर ऐसा पढ़ा देगा कि रसूल कभी भूलेंगे ही नहीं।

हेतु (Hetu):
यह दावा करता है कि अल्लाह द्वारा पढ़ाई गई चीज़ स्थायी स्मृति में रहती है।

उदाहरण (Udaharana):
न्याय दर्शन के अनुसार स्मृति का निर्माण "संस्कार" और "पूर्व अनुभव" से होता है; किसी दिव्य शक्ति के वचन मात्र से नहीं।

उपनय (Upanaya):
 यदि कोई मनुष्य स्मृति दोष, बीमारी, या अनियमित ध्यान के कारण भूल सकता है, तो “कभी भूल न सकना” का दावा अनुमान और अनुभव दोनों के विपरीत है।

निगमन (Nigamana):
 यह आयत मानव स्मृति की स्वाभाविक सीमाओं को नकारती है, और एक अलौकिक वादे पर आधारित है जिसका कोई सार्वभौमिक प्रमाण नहीं। अतः न्याय दर्शन की अनुमान विधि के अनुसार असंगत है।

□ □□□ 7

"मगर जो ख़ुदा चाहे (मन्सूख़ कर दे), बेशक वह खुली बात को भी जानता है और छुपी हुई को भी।"

चयनित न्याय तत्त्व: प्रमाण (Pramana)

विश्लेषण:

प्रतिज्ञा (Pratijna):
 ईश्वर जब चाहे ज्ञान को रद्द कर सकता है क्योंकि वह सब जानता है।

हेतु (Hetu):
 यह कथन ईश्वर की सर्वज्ञता और नियंत्रण को प्रमाणित करने हेतु प्रस्तुत किया गया है।

उदाहरण (Udaharana):
 न्याय दर्शन में प्रमाण को तर्क, प्रत्यक्ष, अनुमान और शब्द के द्वारा स्वीकार किया गया है। "मर्जी" को प्रमाण नहीं माना गया।

उपनय (Upanaya):
 "मर्जी के अनुसार ज्ञान को मिटा देना" प्रमेय नहीं हो सकता जब तक कि यह किसी प्रत्यक्ष या अनुमेय प्रमाण द्वारा स्थापित न हो।

निगमन (Nigamana):
 यह आयत प्रमाणविहीन सर्वज्ञता और मर्जी आधारित ज्ञान-ह्रास की कल्पना करती है, जो न्याय दर्शन के प्रमाण सिद्धांत के विपरीत है।

□ □□□ 8

"और हम तुमको आसान तरीके की तौफ़ीक़ देंगे।"

चयनित न्याय तत्त्व: हेतु (Reason)

विश्लेषण:

प्रतिज्ञा (Pratijna):
ईश्वर रसूल को सरल मार्ग पर चलने की योग्यता देगा।

हेतु (Hetu):
ईश्वर की इच्छा से मार्ग सरल कर दिया जाएगा।

उदाहरण (Udaharana):
पातंजल योगदर्शन में मार्ग की सरलता साधक की अभ्यास, वैराग्य और मनोनिग्रह से आती है; कृपा से नहीं।

उपनय (Upanaya):
आसान मार्ग केवल बाह्य कृपा से नहीं मिल सकता, उसमें व्यक्ति की चेतना, विवेक और प्रयत्न की भूमिका अनिवार्य होती है।

निगमन (Nigamana):
यह आयत कर्म और पुरुषार्थ के सिद्धांत को नकारती है, जो न्याय एवं योग दर्शन दोनों के विपरीत है।

□ □□□ 9

"तो जहाँ तक समझाना मुफ़ीद हो समझते रहो।"

चयनित न्याय तत्त्व: उपमान (Upamana)

विश्लेषण:

प्रतिज्ञा (Pratijna):
 वह बात कहो जो लाभप्रद हो।

हेतु (Hetu):
 उपदेश केवल वहीं दो जहाँ उसका असर हो।

उदाहरण (Udaharana):
 गीता में भी श्रीकृष्ण कहते हैं: "न बुद्धिभेदं जनयेदज्ञानां कर्मसङ्गिनाम्।" (BG 3.26) – "अज्ञानी जनों को व्यर्थ उपदेश देना उनकी स्थूल बुद्धि को भ्रमित कर सकता है।"

उपनय (Upanaya):
 यह नीति उपदेश की सीमितता दर्शाती है – पर न्याय दर्शन अनुसार उपदेश का प्रभाव श्रावक के विवेक और तर्क पर निर्भर है, न कि केवल सन्देश के "फायदे" पर।

निगमन (Nigamana):
 यह आयत सन्देश की सत्यता नहीं, उपयोगिता को प्राथमिकता देती है; जो सत्य को सापेक्ष और मनोभावनाओं पर आधारित बना देती है। न्याय दर्शन के सार्वभौमिक सत्य की परिभाषा से यह विचलित है।

□ □□□ 10

"जो खौफ रखता हो वह तो फौरी समझ जाएगा।"

चयनित न्याय तत्त्व: व्याप्ति (Vyapti)

विश्लेषण:

प्रतिज्ञा (Pratijna):
 जो भयभीत है वह तुरंत समझेगा।

हेतु (Hetu):
 भयग्रस्त व्यक्ति जल्दी अनुशासन में आ जाता है।

उदाहरण (Udaharana):

मनुस्मृति के अनुसार "भीतः प्रवर्तते धर्मे।" – भय से धर्म पालन तो होता है परंतु वह स्थायी नहीं होता।

उपनय (Upanaya):

भय आधारित शिक्षा दीर्घकालीन नहीं होती; ज्ञान और विवेक से ही स्थायी समझ विकसित होती है।

निगमन (Nigamana):

यह आयत विवेकपूर्ण बोध के स्थान पर भय को बोध का आधार बनाती है, जो न्याय दर्शन में अधम ज्ञान की श्रेणी में आता है।

□ समग्र सारणी : न्याय दर्शन के आधार पर आयतों का मूल्यांकन

आयत संख्या	चुना गया न्याय तत्त्व	मुख्य विरोधाभास
6	**अनुमान**	**भूल न होना मानव स्वभाव के विरुद्ध है, केवल वचन से सिद्ध नहीं।**
7	**प्रमाण**	**ईश्वर की मर्जी से ज्ञान रद्द होना प्रमाणविहीन धारणा है।**
8	**हेतु**	**मार्ग की सरलता योग्यता व पुरुषार्थ से आती है, कृपा से नहीं।**
9	**उपमान**	**सत्य का मूल्य "उपयोगिता" से जोड़ना न्याय दर्शन के विरुद्ध।**
10	**व्याप्ति**	**भय को समझ का आधार बनाना विवेकशील शिक्षण के विरुद्ध है।**

□ निष्कर्ष **(Conclusion — Verse-wise):**

आयत	निष्कर्ष
6	**स्मृति का दैवीकरण तर्कसंगत नहीं है।**

7 ज्ञान की मर्ज़ी से रद्दीकरण प्रमाणों के नियम के विरुद्ध है।

8 आत्मविकास हेतु सरलता का मार्ग स्वयं प्रयास से आता है, वरदान से नहीं।

9 ज्ञान केवल ’लाभ’ पर आधारित नहीं हो सकता, सत्य स्वयं साध्य है।

10 भय आधारित समझ अस्थायी और तर्कहीन होती है।

आप चाहें तो अगली आयतें भेजें, हम इसी न्याय दर्शन के ढांचे में विश्लेषण करते रहेंगे।

नीचे प्रस्तुत है सूरह अल-आला (87:11–15) की आयतों का न्याय दर्शन (Nyaya Darshan) के अनुसार विस्तृत तर्कपूर्ण खंडन। प्रत्येक आयत को न्याय शास्त्र की पञ्चावयव वाक्य पद्धति (Pratijna, Hetu, Udaharana, Upanaya, Nigamana) **और न्याय दर्शन के किसी न किसी प्रमुख तत्व (जैसे प्रमाण, व्याप्ति, अनुमान, हेतु आदि) से विश्लेषित किया गया है। साथ ही भारतीय दर्शनों (विशेषकर न्याय दर्शन, योग दर्शन, भगवद्गीता, मनुस्मृति आदि) से तुलनात्मक दृष्टिकोण भी दिया गया है।**

□ □□□ 11

”और बदबख़्त उससे पहलू तही करेगा।”

चयनित न्याय तत्त्व: प्रमेय (Prameya – Knowable entity)

विश्लेषण:

प्रतिज्ञा (Pratijna):
दुर्भाग्यशाली व्यक्ति ईश्वर की याद या नमाज़ से दूरी करेगा।

हेतु (Hetu):
क्योंकि वह दोषपूर्ण या पतित आत्मा है।

उदाहरण (Udaharana):
न्याय शास्त्र अनुसार, कोई भी व्यक्ति केवल ”भाग्य” के आधार पर नहीं बल्कि कर्म और ज्ञान से सन्मार्ग या कुमार्ग पर जाता है।

उपनय (Upanaya):
जब तक प्रमाण द्वारा किसी को 'बदबख्त' सिद्ध नहीं किया जाता, तब तक ऐसा निर्णय पूर्वाग्रह है।

निगमन (Nigamana):
यह आयत किसी व्यक्ति को "दुर्भाग्यशाली" बताकर ईश्वर से दूरी का कारण मानती है, जो न्यायदर्शन की यथार्थ ज्ञान प्रणाली (प्रमाण और प्रमेय) के विपरीत है।

□ □□□ 12

"जो (क़यामत में) बड़ी (तेज़) आग में दाख़िल होगा।"

चयनित न्याय तत्त्व: अनुमान (Anumana – Inference)

विश्लेषण:

प्रतिज्ञा (Pratijna):
दुर्भाग्यशाली व्यक्ति तेज़ आग (नरक) में जाएगा।

हेतु (Hetu):
क्योंकि उसने ईश्वर की याद से मुँह मोड़ा।

उदाहरण (Udaharana):
योग दर्शन कहता है कि नरक और स्वर्ग आत्मा की स्थिति नहीं, बल्कि चित्तवृत्तियों की स्थिति है।

उपनय (Upanaya):
किसी अदृश्य, अपरिचित और अनुभव से परे चीज़ (नरक की अग्नि) को दंड का रूप देना तर्क के लिए अनुपयुक्त है।

निगमन (Nigamana):
यह भय उत्पन्न करने वाली कल्पना न्यायदर्शन के अनुमान सिद्धांत के विरुद्ध है, जहाँ अनुभव या युक्ति के बिना निष्कर्ष नहीं निकाले जाते।

□ □□□ 13

"फिर न वहाँ मरेगा ही न जीयेगा।"

चयनित न्याय तत्त्व: व्याप्ति (Vyapti – Invariable Concomitance)

विश्लेषण:

प्रतिज्ञा (Pratijna):
उस व्यक्ति की हालत यह होगी कि न मरेगा न जीएगा।

हेतु (Hetu):
उस पर निरंतर दंड (आग) लागू रहेगा।

उदाहरण (Udaharana):
मनुस्मृति और भगवद्गीता में आत्मा का वर्णन "अविनाशी, अजर, अमर" के रूप में है। (BG 2.20)

उपनय (Upanaya):
यदि आत्मा न मरती है और न कभी जन्म लेती है, तो "न मरे न जीए" जैसी अवस्था विरोधाभासी है – यह शरीर के सन्दर्भ में नहीं बल्कि चेतना के स्तर पर भी अव्यवस्थित है।

निगमन (Nigamana):
यह वाक्य न्यायदर्शन के व्याप्ति सिद्धांत (जहाँ कारण और कार्य का अपरिहार्य संबंध होता है) के विपरीत एक असंगत कल्पना है।

□ □□□ 14

"वह यक़ीनन मुराद दिली को पहुँचा जो (शिर्क से) पाक हो।"

चयनित न्याय तत्त्व: हेतु (Reasoning)

विश्लेषण:

प्रतिज्ञा (Pratijna):
सफलता उसी को मिलेगी जो शिर्क से मुक्त हो।

हेतु (Hetu):
क्योंकि वह एकमात्र ईश्वर की उपासना करता है।

उदाहरण (Udaharana):
न्याय दर्शन के अनुसार, मोक्ष का कारण है - तत्त्वज्ञान, न कि केवल 'एक ईश्वर' में विश्वास।

उपनय (Upanaya):
जो व्यक्ति सत्य को जानता है, वह समस्त द्वैत, अहंकार और सीमित उपासना के बंधनों से मुक्त होता है – न कि केवल "शिर्क" न करने से।

निगमन (Nigamana):
यह आयत मोक्ष की प्राप्ति का कारण तात्त्विक ज्ञान के स्थान पर धार्मिक निष्ठा को बनाती है, जो न्याय दर्शन की मुक्ति के हेतु के विपरीत है।

□ □□□ 15

"और अपने परवरदिगार का ज़िक्र करता और नमाज़ पढ़ता रहा।"

चयनित न्याय तत्त्व: प्रमाण (Pramana – Valid Source of Knowledge)

विश्लेषण:

प्रतिज्ञा (Pratijna):
जो परमेश्वर का जिक्र करता और नमाज़ पढ़ता है वही सच्चे मार्ग पर है।

हेतु (Hetu):
क्योंकि वह ईश्वर की आराधना निरंतर करता है।

उदाहरण (Udaharana):

पातंजल योगदर्शन में परमात्मा की साधना ध्यान, स्वाध्याय और ईश्वर-प्रणिधान के रूप में होती है – वह किसी विशेष क्रिया (नमाज़) तक सीमित नहीं।

उपनय (Upanaya):

केवल एक निश्चित पद्धति को "मोक्ष-साधन" कहना अन्य सभी प्रमाण आधारित मार्गों (ध्यान, आत्मज्ञान, वेदाध्ययन) का खंडन है।

निगमन (Nigamana):

यह आयत ईश्वर भक्ति को एक सांप्रदायिक विधि (नमाज़) में सीमित करती है, जो सार्वभौमिक प्रमेय और प्रमाण सिद्धांत के विरुद्ध है।

□ तात्त्विक तुलना सारणी : न्याय दर्शन के अनुसार आयतों की समीक्षा

आयत संख्या	न्याय तत्व	तर्कगत दोष
11	**प्रमेय**	**"बदबख़्त" की अवधारणा पूर्वग्रहपूर्ण और अप्रमाणिक है।**
12	**अनुमान**	**क़यामत की आग अनुभव या प्रमाण से सिद्ध नहीं होती।**
13	**व्याप्ति**	**"न मरे न जीये" तर्कहीन और विरोधाभासी कथन है।**
14	**हेतु**	**मोक्ष का कारण 'शिर्क से बचाव' नहीं, ज्ञान है।**
15	**प्रमाण**	**नमाज़ को एकमात्र प्रमाणित मोक्ष मार्ग बताना अप्रामाणिक है।**

□ निष्कर्ष **(Conclusion — Verse-wise):**

आयत	निष्कर्ष
11	**"बदबख़्त" कह कर किसी को दोषी ठहराना तात्त्विक अन्याय है।**

12 **तेज़ आग में प्रवेश जैसी कल्पनाएँ केवल भय उत्पन्न करती हैं, ज्ञान नहीं।**

13 **“न जीना न मरना” - अस्तित्व की व्याख्या में तर्कहीनता है।**

14 **मोक्ष का कारण केवल ’शिर्क से बचना’ नहीं, आत्मज्ञान है।**

15 **धार्मिक क्रिया (नमाज़) को मोक्ष का एकमात्र साधन मानना अन्य दर्शनों का खंडन करता है।**

यदि आप अगली आयतों का भी न्याय-दर्शन विश्लेषण चाहते हैं, कृपया क्रमशः भेजते रहें।

यहाँ प्रस्तुत है सूरह अल-आला (87:16-19) की आयतों का न्याय दर्शन (Nyaya Darshan) आधारित तात्त्विक और तर्कशास्त्रीय विश्लेषण, जिसमें प्रत्येक आयत को न्याय शास्त्र की पञ्चावयव वाक्य पद्धति और एक-एक Nyaya Darshan तत्व के अनुसार खंडित किया गया है। साथ ही अन्य दर्शनों (जैसे योगदर्शन, भगवद्गीता, मनुस्मृति, सांख्य आदि) से तुलनात्मक विवेचन भी दिया गया है।

□ □□□ 16

”मगर तुम लोग दुनियावी ज़िन्दगी को तरजीह देते हो।”

चयनित न्याय तत्त्व: प्रमेय (Prameya – विषय वस्तु)

विश्लेषण:

प्रतिज्ञा (Pratijna):
मानव संसारिक जीवन को प्राथमिकता देता है।

हेतु (Hetu):
क्योंकि वह भौतिक लाभों और इच्छाओं में लिप्त रहता है।

उदाहरण (Udaharana):
मनुस्मृति (2.1) कहती है कि मनुष्य को ‘धर्म, अर्थ, काम’ का संतुलन बनाए रखना चाहिए – केवल त्याग नहीं।

उपनय (Upanaya):
 यदि कोई मनुष्य केवल संसार को 'निंदनीय' मानता है, तो वह धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष के चतुर्विध पुरुषार्थों का अपमान करता है।

निगमन (Nigamana):
 यह आयत संसारिक जीवन को पूर्ण रूप से हीन ठहराती है, जबकि भारतीय दर्शनों में गृहस्थ धर्म को मोक्ष की भूमिका के रूप में स्वीकार किया गया है।

□ □□□ 17

"हालाकि आख़िरत कहीं बेहतर और देरपा है।"

चयनित न्याय तत्त्व: अनुमान (Anumana – अनुमान)

विश्लेषण:

प्रतिज्ञा (Pratijna):
 आख़िरत (परलोक) संसारिक जीवन से उत्तम है।

हेतु (Hetu):
 क्योंकि वह अनंत और स्थायी है।

उदाहरण (Udaharana):
 भगवद्गीता अध्याय 2, श्लोक 20 में कहा गया है: न जायते म्रियते वा कदाचित्... आत्मा न जन्म लेती है न मरती है – यह आत्मा की विशेषता है, "अख़िरत" की नहीं।

उपनय (Upanaya):
 यदि "आख़िरत" को बेहतर मानने का आधार केवल इसकी स्थायित्वता है, तो यह अनुमान अप्रमाणिक है क्योंकि परलोक का स्वरूप कभी प्रत्यक्ष या प्रमाण से सिद्ध नहीं हुआ।

निगमन (Nigamana):
 यह आयत परलोक की श्रेष्ठता को बिना प्रमाण के स्वीकार करती है, जो न्याय दर्शन के अनुमान की वैधता की कसौटी पर अस्वीकार्य है।

□ □□□ 18

"बेशक यही बात अगले सहीफ़ों में है।"

चयनित न्याय तत्त्व: प्रमाण (Pramana – प्रमाण)

विश्लेषण:

प्रतिज्ञा (Pratijna):
 यह विचार (आख़िरत की श्रेष्ठता) पिछले ग्रंथों में भी दर्ज है।

हेतु (Hetu):
 इसलिए यह बात सत्य और प्रमाणिक है।

उदाहरण (Udaharana):
 यदि कोई विचार वेद, उपनिषद, गीता आदि में बार-बार कहा गया हो, तो उसे प्रमाण माना जा सकता है, किन्तु केवल संदिग्ध ग्रंथों का हवाला प्रमाण नहीं है।

उपनय (Upanaya):
 मुसा और इब्राहीम के सहीफ़े न्याय दर्शन के अनुसार प्रत्यक्ष, अनुमान या शब्द प्रमाण की कसौटी पर पूरे नहीं उतरते, क्योंकि वे पूर्ण नहीं बचे हैं और उनमें बदलाव हुए हैं।

निगमन (Nigamana):
 यह आयत प्रमाण के रूप में संदिग्ध व अधूरे ग्रंथों को प्रस्तुत करती है, जो न्याय-दर्शन की प्रमाण की कसौटी पर खरे नहीं उतरते।

□ □□□ 19

"इबराहीम और मूसा के सहीफ़ों में भी है।"

चयनित न्याय तत्त्व: शब्द प्रमाण (Shabda Pramana)

विश्लेषण:

प्रतिज्ञा (Pratijna):
इबराहीम और मूसा के ग्रंथों में भी यही उपदेश था।

हेतु (Hetu):
इसलिए यह शिक्षाएँ सार्वभौमिक और दिव्य मानी जाएँ।

उदाहरण (Udaharana):
न्याय दर्शन में शब्द प्रमाण वेद हैं – अपौरुषेय (non-human origin) और अपरिवर्तनीय। बाइबिल या अन्य ग्रंथ मानव कृत हैं, इसलिए आप्त वचन नहीं माने जा सकते।

उपनय (Upanaya):
यदि ग्रंथों में मानवीय संशोधन हुआ हो या वे सम्पूर्ण रूप में उपलब्ध न हों, तो न्यायदृष्टि से वे आप्त या विश्वसनीय प्रमाण नहीं बन सकते।

निगमन (Nigamana):
यह आयत जिन ग्रंथों को प्रमाण मानती है वे न्याय दर्शन के शाब्द प्रमाण की कसौटी पर अमान्य हैं।

तात्त्विक तुलना सारणी : न्याय दर्शन अनुसार दोष सूची

आयत संख्या	न्याय तत्त्व	तात्त्विक दोष
16	प्रमेय	संसारिक जीवन को हीन ठहराना चतुर्विध पुरुषार्थ के विरुद्ध।
17	अनुमान	परलोक की श्रेष्ठता का अनुमान प्रमाण से रहित है।
18	प्रमाण	अधूरे व संदिग्ध ग्रंथों को प्रमाण रूप में स्वीकारना अप्रमाणिक है।
19	शब्द प्रमाण	इब्राहीम-मूसा के ग्रंथ न्यायदृष्टि से आप्त वचन नहीं माने जा सकते।

निष्कर्ष **(Conclusion – Verse-wise):**

आयत	निष्कर्ष
16	जीवन की पूर्णता को नकारना न्याय और पुरुषार्थ सिद्धांत के विरुद्ध है।
17	”आख़िरत” की श्रेष्ठता का कोई प्रमाण न होना अनुमान को अमान्य बनाता है।
18	पिछले सहीफ़ों का उल्लेख प्रमाण नहीं, केवल स्मृति है।
19	मानव कृत ग्रंथ न्याय दर्शन के ‘शब्द प्रमाण’ की श्रेणी में नहीं आते।

यदि आप चाहें तो अगली सूरा या किसी अन्य अध्याय की आयतें भेजें – मैं उसी शैली में न्याय दर्शन के अनुसार तर्क सहित आलोचनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता रहूँगा।